पूर्ण बेंच

लेटर्स पेटेंट अपील

न्यायमूर्ति एस एस संधावालिया, प्रेम चंद जैन

और गुरनाम सिंह, के समक्ष।

पंजाब विश्वविद्यालय, अपीलकर्ता।

बनाम

सुभाष चंदर और अन्य, उत्तरदाता।
1975 के लेटर्स पेटेंट अपील नंबर 352

7 सितंबर, 1976।

पंजाब विश्वविद्यालय अधिनियम (1941 का VII) - धारा 31 (1) और 31 (2) (एन) - *पंजाब विश्वविद्यालय कैलेंडर* (1966) *खंड II - विनियम* 2, *25, 28 और 29* - सीनेट - क्या पूर्वव्यापी रूप से नियमों को तैयार करने या बदलने का अधिकार है - चिकित्सा विज्ञान संकाय - अध्ययन और प्रत्येक विश्वविद्यालय परीक्षा - चाहे एक समेकित और समग्र पाठ्यक्रम का गठन किया जाए।

पंजाब विश्वविद्यालय अधिनियम 1947 की धारा 31 की सीधी भाषा से, यह स्पष्ट है कि इसमें ऐसा कुछ भी नहीं है जो सीनेट को पूर्वव्यापी रूप से विनियम तैयार करने की शक्ति के साथ स्पष्ट रूप से या अंतर्निहित रूप से कवर करेगा। पूर्वव्यापी रूप से कानून बनाने की शक्ति एक महत्वपूर्ण और शक्तिशाली कार्य है जिसे विधायिका द्वारा सावधानी के साथ प्रयोग किया जाएगा और यह केवल तभी होता है जब यह स्पष्ट रूप से अपने प्रतिनिधियों को ऐसी शक्ति के प्रयोग को अधिकृत करता है कि अधीनस्थ प्राधिकरण को ऐसी शक्ति माना जा सकता है।

अधिनियम की धारा 31 में ऐसा कोई प्राधिकार नहीं है। नतीजतन, छात्रों के नुकसान के लिए परीक्षा लेने के लिए शर्तों को पूर्वव्यापी रूप से बदलने वाले विनियम उन पर लागू नहीं किए जा सके। इस प्रकार एक छात्र को कछुए में मौजूद विनियमों द्वारा शासित किया जाना जारी रहेगा जब वह अपने अध्ययन के पाठ्यक्रम में शामिल हो जाएगा।

सेवा राम *बनाम* कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, एलपीए 97 1967 17 जुलाई, 1968 को फैसला सुनाया गया।

(पैरा 15)

माना जाता है, कि जब कोई छात्र चिकित्सा विज्ञान संकाय में शामिल होता है तो वह बैचलर ऑफ मेडिसिन और बैचलर ऑफ सर्जरी की डिग्री प्राप्त करने के इरादे से ऐसा करता है। पहली या दूसरी व्यावसायिक परीक्षा पास करने के बाद किसी छात्र को कोई डिग्री या डिप्लोमा भी प्रदान नहीं किया जाता है। विनियमों की योजना में कोई संदेह नहीं है कि चिकित्सा संकाय के लिए अध्ययन का पूरा पाठ्यक्रम एक समेकित और समग्र पाठ्यक्रम है, जिसे स्वतंत्र वार्षिक परीक्षाओं से युक्त माना जा सकता है। यह योजना अध्ययन के पाठ्यक्रम को एकल एकीकृत के रूप में देखती है और पाठ्यक्रम के पूरा होने पर छात्र एमबीबीएस डिग्री का हकदार होगा। विनियम 28 और 29 इंगित करते हैं कि उम्मीदवारों को केवल तभी डिग्री प्रदान की जाएगी जब उन्होंने अनिवार्य घूर्णन हाउसमैनशिप के परीक्षा के बाद प्रशिक्षण पूरा कर लिया हो।

इस प्रकार, पंजाब विश्वविद्यालय के एमबीबीएस और चिकित्सा विज्ञान संकाय अध्ययन का एक एकीकृत समग्र पाठ्यक्रम है।

(पैरा 18)

लेटर्स *पेटेंट के क्लॉज एक्स के तहत लेटर्स पेटेंट अपील* माननीय जस्टिस एएस बैंस के फैसले को 6 *मई, 1975 को* 1975 *के सिविल रिट नंबर* 1017 में पारित किया गया था।

जेएल गुप्ता, वकील और अपीलकर्ता के वकील श्री लखिंदर सिंह। उत्तरदाताओं की ओर से मेसर्स डीएस कीर, आरएस सहगल, *वकील एलके सूद।*

निर्णय

(1)एसएस संधावालिया, जे- लेटर्स पेटेंट के क्लॉज 10 के तहत इस अपील में पूर्ण पीठ के समक्ष जो बड़ा मुद्दा है, वह यह है कि क्या पंजाब विश्वविद्यालय अपने विनियमों को इस तरह से तैयार या बदल सकता है कि अपने छात्रों को उनके अध्ययन के बीच में ही प्रभावित कर सके।

(2)सुभाष चंद्र, याचिकाकर्ता-प्रतिवादी, ने वर्ष 1965 में चिकित्सा विज्ञान संकाय में एमबीबीएस की डिग्री के लिए अध्ययन करने के लिए दया नंद मेडिकल कॉलेज, लुधियाना में प्रवेश लिया। उस समय वह पंजाब विश्वविद्यालय कैलेंडर खंड II पी 383 के प्रचलित विनियमन 25 द्वारा शासित थे, जिसमें प्रावधान किया गया था कि परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए आवश्यक अंकों की न्यूनतम संख्या प्रत्येक विषय में अलग-अलग 50 प्रतिशत होगी। तथापि, उस समय इस विनियम का संगत और विशेष प्रावधान निम्नलिखित शर्तों में था -

> "एक उम्मीदवार जो एक या अधिक पेपर/ विषय में अनुत्तीर्ण होता है और / या कुल कुल अंकों के 1 प्रतिशत से अधिक नहीं होता है, उसे सिंडिकेट द्वारा समय-समय पर अनुमोदित नियमों के अनुसार परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए आवश्यक अंक दिए जाएंगे"।

तथापि, बाद में मई, 1970 में विश्वविद्यालय द्वारा उपर्युक्त प्रावधान में संशोधन किया गया जो 1970 के विनियम 21 के अपवाद के रूप में

पंजाब विश्वविद्यालय कैलेंडर खंड-I पृष्ठ 116 -

"2.1. एक उम्मीदवार, जो परीक्षा के सभी विषयों में उपस्थित होता है और जो एक या अधिक विषयों (लिखित, व्यावहारिक, सत्रीय या *मौखिक* परीक्षा और / या कुल (यदि कुल में उत्तीर्ण होने की एक अलग आवश्यकता है) में असफल हो जाता है, तो कमी को पूरा करने के लिए कुल अंकों (आंतरिक मूल्यांकन के लिए अंकों को छोड़कर) के अधिकतम 1 प्रतिशत तक रियायती अंक दिए जाएंगे। यदि इस तरह के जोड़ से उम्मीदवार परीक्षा उत्तीर्ण कर सकता है। रियायती अंक प्रदान करते समय काम करने वाले अंश को पूरी तरह से गोल किया जाएगा"।

अपवाद - एमबीबीएस और बीडीएस परीक्षाओं के मामले में, हालांकि, रियायती अंक प्रत्येक विषय के कुल अंकों के एक प्रतिशत तक दिए जाएंगे, और सभी विषयों के कुल के एक प्रतिशत तक नहीं। दूसरे शब्दों में, प्रत्येक विषय, इस उद्देश्य के लिए, एक अलग इकाई होगी, और एक उम्मीदवार, जो किसी विषय में उस विषय के कुल अंकों के एक प्रतिशत से अधिक नहीं फेल होता है, उसे उस विषय में उत्तीर्ण होने के लिए आवश्यक संख्या में अंक दिए जा सकते हैं।

(3) याचिकाकर्ता-प्रतिवादी ने विधिवत योग्यता प्राप्त की और पहले की व्यावसायिक परीक्षाओं में उत्तीर्ण होकर वर्ष 1974 में एमबीबीएस अंतिम व्यावसायिक परीक्षा में उपस्थित हुए और निम्नलिखित अंक प्राप्त किए: -

i) दवाएं- 400 में से 202 पी।

ii) सर्जरी - 400 पी में से 225।

iii) आंख और ईएनटी - 400 पी में से 204।

iv) प्रसूति-विद्या

1) सिद्धांत - 200 में से 95 पुन: प्रकट हों
2) प्रैक्टिकल - 200 में से 106

(4) जैसा कि वर्ष 1965 में लागू विनियम 25 के अनुसार, पीयू कैलेंडर 1966 (खंड 14 पृष्ठ 142) के नियम 7 (1) के साथ पढ़ा जाता है, याचिकाकर्ता-प्रतिवादी कुल अंकों के 1 प्रतिशत की सीमा तक अनुग्रह अंक देने का हकदार था, जिसका अर्थ होगा कि वह कुल मिलाकर 16 अनुग्रह अंकों का हकदार था जिसका लाभ वह विभिन्न विषयों में से किसी एक या अधिक के संबंध में दावा कर सकता था। प्रतिवादी का दावा है कि श्री अनिल कुमार, मिस चांद रानी और सर्वेश्वरी पवन कुमार गर्ग और मदन मोहन के मामलों में वर्ष 1973 में भी इस रियायत की अनुमति जारी रखी गई थी। हालांकि, याचिकाकर्ता-प्रतिवादी के मामले में विश्वविद्यालय ने पहले के विनियमन 25 को लागू करने से इनकार कर दिया और नए विनियमों के तहत अपने मामले को नियंत्रित करने पर जोर दिया, जिसके तहत वह प्रत्येक विषय के कुल अंकों के केवल एक प्रतिशत की सीमा तक अनुग्रह अंक प्राप्त कर सकता था, न कि कुल मिलाकर। नतीजतन परिणाम यह हुआ कि याचिकाकर्ता-प्रतिवादी को मिडवाइफरी के विषय में फिर से उपस्थित होने का निर्देश दिया गया।

(5) याचिकाकर्ता-प्रतिवादी ने अपने परिणाम की घोषणा को मुख्य रूप से इस आधार पर चुनौती दी कि नए विनियम उसके अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव डालने के लिए पूर्वव्यापी प्रभाव से नहीं बनाए जा सकते हैं और इसलिए, वह वर्ष 1965 में मौजूद पुराने विनियमन 25 द्वारा

शासित रहेगा। एकल न्यायाधीश ने इस दलील को स्वीकार कर लिया और माना कि याचिकाकर्ता पुराने विनियमन द्वारा शासित था, न कि नए संशोधित विनियमन द्वारा और परिणामस्वरूप विश्वविद्यालय को पुराने विनियमन 25 के अनुसार रियायती अंक का लाभ देने के बाद याचिकाकर्ता के परिणाम को नए सिरे से घोषित करने का निर्देश देने के साथ रिट याचिका को अनुमति दी। पंजाब विश्वविद्यालय अपील करता है।

(6) अपीलकर्ता की ओर से श्री जेएल गुप्ता ने पहले स्पष्ट रूप से तर्क दिया है कि विश्वविद्यालय के पास पूर्वव्यापी प्रभाव से अपने नियमों को तैयार करने की शक्ति है, भले ही वे अध्ययन के दौरान छात्रों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकते हैं। यह उनका मामला है कि एक छात्र किसी विशेष परीक्षा के आयोजन की तारीख पर मौजूद विनियमों के अनुसार अपनी डिग्री या डिप्लोमा सुरक्षित करने का हकदार है और किसी भी छात्र को उन नियमों से बहने का कोई निहित अधिकार नहीं है जो उसके अध्ययन के पाठ्यक्रम में शामिल होने के दौरान लागू हो सकते हैं। वैकल्पिक मामले में वकील ने तर्क दिया है कि वर्तमान मामले में संशोधित नियमों में पुनरावलोकन का कोई तत्व नहीं है और प्रत्येक वार्षिक परीक्षा एक अलग और विशिष्ट इकाई है। नतीजतन, यह तर्क दिया गया था कि ऐसी प्रत्येक परीक्षा को तब लागू नियमों द्वारा नियंत्रित किया जाना चाहिए और अध्ययन के पाठ्यक्रम की अवधारणा अच्छी तरह से स्थापित नहीं है।

(7) अनिवार्य रूप से पार्टियों के विद्वान वकीलों ने अपने संबंधित दावों के समर्थन में इस न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया है। इसलिए, मैं शुरू में ही यह राय दे सकता हूं कि संबंधित मामला कानून एक उलझी हुई स्थिति में प्रतीत होता है, जो मिसाल के टकराव को दर्शाता है, जिसके परिणामस्वरूप कोई भी पक्ष अपने विवादास्पद

प्रस्तावों के समर्थन में आधिकारिक निर्णयों पर भरोसा करने में सक्षम रहा है। हमारे सामने पक्षकारों के वकीलों ने इसलिए विपरीत पक्ष द्वारा भरोसा किए गए निर्णयों की शुद्धता पर सवाल उठाया है। इसलिए, बार में उद्धृत अधिकारियों को कुछ विस्तृत संदर्भ देना अपरिहार्य और आवश्यक दोनों हो जाता है।

(8) अपीलकर्ता की ओर से मूल निर्भरता *सेवा राम के मामले पर है।* यह कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय अधिनियम, 1956 की धारा 16 के तहत बनाए गए नियमों से संबंधित है। इसमें उक्त विश्वविद्यालय ने छात्र के पूर्वाग्रह को देखते हुए पाठ्यक्रम और योग्यता अंकों की मात्रा को पूर्वव्यापी रूप से बदल दिया था और छात्र याचिकाकर्ता ने संशोधन की आलोचना की थी। विद्वान एकल न्यायाधीश ने दृढ़ता से कहा कि डिग्री प्राप्त करने की शर्तों को सामान्य रूप से एक विश्वविद्यालय द्वारा एक पाठ्यक्रम के बीच में नहीं बदला जाना चाहिए, जिसमें उम्मीदवारों को पहले से ही भर्ती कराया जा सकता है, फिर भी *सेवा राम* बनाम *कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय* में प्रभावित छात्र के पक्ष में रिट देने से इनकार कर दिया। (1) इसमें आगे यह देखा गया कि यदि विश्वविद्यालयों में अनुशासन बनाए रखना है, तो छात्रों को पता होना चाहिए कि उनके शैक्षिक करियर का भाग्य पूरी तरह से शिक्षाविदों के हाथों में था और उनके लिए राहत के लिए किसी अन्य स्रोत की ओर देखना निरर्थक होगा।

(9) उपरोक्त निर्णय को 1967 के एलपीए संख्या 97 में चुनौती दी गई थी, जो 17 जुलाई, 1968 को तय किया गया था। फैसले की पुष्टि करते हुए और पीठ की ओर से बोलते हुए न्यायाधीश महाजन ने इस आशय की स्पष्ट और व्यापक टिप्पणियां कीं कि विश्वविद्यालयों को पाठ्यक्रम और परीक्षा आयोजित करने के नियमों और शर्तों को भावी प्रभाव से और पूर्वव्यापी रूप से बदलने और बदलने का अधिकार है और

ऐसी किसी भी कार्रवाई से असंतुष्ट छात्र को केवल विश्वविद्यालय छोड़ने और प्रवेश लेने की स्वतंत्रता है। कहीं और लेकिन उसे चुनौती देने का शायद ही कोई अधिकार है। सेवा राम के मामले पर दृढ़ता से भरोसा करते हुए, गुप्ता ने तर्क दिया है कि उस फैसले का अनुपात कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय अधिनियम की धारा 16 (2) (सी) की भाषा में किसी भी भेद से आगे नहीं बढ़ता है, जबकि पंजाब विश्वविद्यालय अधिनियम की धारा 31 के प्रावधान के खिलाफ है, जिसके तहत वर्तमान मामले में विनियम तैयार किए गए हैं। उनका कहना है कि *सेवा राम के मामले में विद्वान एकल न्यायाधीश और पुष्टि पत्र पेटेंट पीठ दोनों* ने व्यापक सिद्धांत निर्धारित किया है कि सभी विश्वविद्यालयों के पास किसी भी समय अपने विनियमों में संशोधन करने, बदलने या फिर से तैयार करने की व्यापक शक्ति है और किसी भी विश्वविद्यालय के छात्र को उनकी वैधता को चुनौती देने का कोई निहित कानूनी अधिकार प्राप्त नहीं होता है, भले ही वे उन्हें प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकते हों। स्पष्ट रूप से कहें *तो सेवा राम के मामले* में की गई टिप्पणियों को अगर बिना किसी आपत्ति के पढ़ा जाए तो यह वास्तव में गुप्ता के तर्क को समर्थन देगा ।

(10)दूसरी ओर, प्रतिवादी के विद्वान वकील ने बलपूर्वक बताया था कि इस न्यायालय के भीतर सेवा राम के मामले में अपनाए गए अतिवादी रुख से बाद में एक बदलाव आया है। वकील ने पहले *बलदेव चंद आदि* बनाम *पंजाब विश्वविद्यालय* (2) के फैसले पर भरोसा किया, जिसे उसी विद्वान न्यायाधीश (आरएस नरूला जे, जैसा कि उनके लॉर्डशिप थे) ने दिया था, जिन्होंने मूल रूप से *सेवा राम के मामले का* फैसला किया था। इस मामले में याचिकाकर्ता इंजीनियरिंग कॉलेज, चंडीगढ़ में पंजाब विश्वविद्यालय के B.Sc (इंजीनियरिंग) पाठ्यक्रम के छात्र थे, जो बैचलर ऑफ साइंस (इंजीनियरिंग) की डिग्री के लिए पंजाब विश्वविद्यालय द्वारा उनके पूर्वाग्रह के लिए विनियमों में किए

गए कुछ पूर्वव्यापी परिवर्तनों से व्यथित थे। रिट याचिका को स्वीकार कर लिया गया और विद्वान न्यायाधीश ने सेवा राम के मामले में की गई पूर्व टिप्पणियों को समझाया और सीमित कर दिया। यह राय दी गई कि उस मामले में निर्णय कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय अधिनियम की धारा 16 (2) (सी) की विशिष्ट भाषा और अन्य विशिष्ट विशेषताओं पर भी निर्भर हो सकता है, जैसे कि उस मामले में याचिकाकर्ता ने 1966 में नए विनियमों के तहत परीक्षा देने के बाद 1966 में अदालतों का दरवाजा खटखटाया था, जिसे 31 मार्च, 1964 को प्रख्यापित किया गया था। विद्वान न्यायाधीश द्वारा यह भी देखा गया कि छात्रों के शैक्षणिक करियर की मझधार छुरा घोंपना केवल तभी जारी रह सकती है जब यह पूरी तरह से विश्वविद्यालय के अधिकारियों के वैधानिक अधिकार क्षेत्र के भीतर हो और यह माना गया कि पंजाब विश्वविद्यालय के पास पंजाब विश्वविद्यालय अधिनियम की धारा 31 के तहत उसके द्वारा बनाए गए किसी भी विनियम को पूर्वव्यापी प्रभाव देने का कोई अधिकार नहीं है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि *सेवा राम के मामले* में टिप्पणियों को सीमित करने और सीमित करने का प्रयास किया गया था और इस दृष्टिकोण का पालन नहीं किया गया था कि विश्वविद्यालय हमेशा अपने विनियमों को सभी परिस्थितियों में छात्रों के पूर्वाग्रह के लिए पूर्वव्यापी रूप से बदल सकते हैं।

(11) अब *बलदेव चंद के मामले* के अलावा, प्रतिवादियों की ओर से प्राथमिक निर्भरता *राम प्रकाश नगर* बनाम *हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय* (3) में डिवीजन बेंच के फैसले पर है। यह मामला हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार से संबंधित है और याचिका दायर करने वाले छात्र ने शिकायत की थी कि जुलाई, 1968 में पाठ्यक्रम में शामिल होने पर उस पर लागू नियमों और विनियमों को विश्वविद्यालय द्वारा सितंबर, 1969 में नियम 7.2 और 7.64 में संशोधन करके बदल दिया गया था। याचिका को खारिज करते हुए एकल न्यायाधीश ने बलदेव *चंद के मामले में एकल पीठ के फैसले*

और सेवा राम के मामले में डिवीजन बेंच के फैसले के बीच स्पष्ट संघर्ष देखा *और* बाद में खुद को बाध्य महसूस किया। अपील पर, लेटर्स पेटेंट बेंच ने विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले को उलट दिया और याचिका को स्वीकार करते हुए विश्वविद्यालय को उनके मामले से निपटने का निर्देश दिया जैसे कि नए विनियम उन पर लागू नहीं थे। लेटर्स पेटेंट बेंच ने *सेवा राम के मामले का संदर्भ दिया और* फिर भी रिट याचिका को स्वीकार कर लिया और बलदेव चंद के मामले में उक्त मामले पर रखी गई सीमाओं को मंजूरी दे दी।

(12) प्रतिवादियों की ओर से मिस गुरविंदर कौर आदि *बनाम* पंजाब विश्वविद्यालय आदि *(4) में डिवीजन बेंच के फैसले पर भी भरोसा रखा गया है*। पंजाब विश्वविद्यालय द्वारा परीक्षार्थियों को ग्रेस मार्क्स देने से संबंधित नियमों में किए गए संशोधन को पीठ द्वारा रद्द कर दिया गया और 12 के बैच में से दस रिट याचिकाओं को स्वीकार कर लिया गया। हालांकि, यह देखा गया कि परीक्षा में उपस्थित होने के बाद एक परीक्षार्थी के नुकसान के लिए इस तरह का बदलाव नहीं किया जा सकता है और यह भी राय दी गई थी कि संशोधनों के प्रकाशन के बाद तक परिणाम को रोकने का समान रूप से कोई फायदा नहीं था क्योंकि छात्रों को विनियमों में शुरू किए गए परिवर्तनों के लिए खुद को समायोजित करने के लिए पर्याप्त समय नहीं दिया गया था।

(13) पहले के फैसलों का संदर्भ देना शायद बेकार होगा, जिन पर उपरोक्त मामलों में भरोसा किया गया है।

i) सीडब्ल्यू 2450/66, 22 दिसंबर, 1966 को तय किया गया।

ii) सीडब्ल्यू 3014/70, 27 अक्टूबर, 1970 को तय किया गया।

iii) एल.पी.ए. 64-71, 27 मई, 1971 को निर्णय लिया गया

यह उल्लेख करना पर्याप्त है कि अपीलकर्ता के लिए श्री जेएल गुप्ता को अनिवार्य रूप से राम पारकाशी नगर के मामले में लेटर्स पेटेंट बेंच के तर्क को चुनौती देने के लिए मजबूर किया गया था। उन्होंने प्रस्तुत किया कि उक्त प्राधिकरण का तर्क और अनुपात गलत था क्योंकि यह *सेवा राम के मामले में* पहले डिवीजन बेंच के फैसले के विपरीत था। उनके अनुसार, खींचे गए भेद बिना किसी कानूनी अंतर के थे। उनके द्वारा यह बताया गया कि सेवा राम के मामले में न *तो विद्वान एकल न्यायाधीश और न ही खंडपीठ का* निर्णय कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय अधिनियम की धारा 16 की भाषा में किसी भी विशिष्टता के आधार पर आगे बढ़ता है और यह तर्क दिया गया था कि बाद के निर्णय उक्त मामले में एक और तर्क को प्रतिस्थापित या पेश नहीं कर सकते हैं जब संबंधित निर्णय स्वयं इस तरह के किसी भी अंतर पर भरोसा नहीं करते हैं। श्री गुप्ता ने की सराहना *सेवा राम के मामले में* निर्धारित सराहनीय और चरम सिद्धांत और इसकी स्वीकृति के लिए प्रचार किया।

(14)दूसरी ओर, प्रतिवादियों के विद्वान वकील सेवा रानी के मामले में विद्वान एकल न्यायाधीश और लेटर्स पेटेंट बेंच दोनों के निर्णयों की शुद्धता पर सवाल उठाने में समान रूप से मुखर थे। यह तर्क दिया गया था कि लेटर्स पेटेंट बेंच द्वारा व्यापक और व्यापक टिप्पणियां की गई हैं जो न तो सिद्धांत या अधिकार पर समर्थित थीं। यह प्रस्तुत किया गया था कि बलदेव *चंद, राम प्रकाश नगर* और *मिस गुरविंदर कौर के मामलों* (सुप्रा) में इस अदालत के भीतर आभासी असहमति से मामले में नियम की चरम कठोरता पूरी तरह से समाप्त हो गई थी।

(15) निर्णय विधि की उपर्युक्त स्थिति में मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्येक व्यक्तिगत मामले में तथ्यों और तर्कों का विज्ञापन करने से कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा नहीं होगा। वास्तव में उपर्युक्त उदाहरणों की गहराई से विश्लेषण करने से पता चलता है कि किसी भी स्पष्ट सिद्धांत या तर्क को निकालना संभव नहीं है जो यह निर्धारित कर सके कि किसी विश्वविद्यालय द्वारा अपने छात्रों के पूर्वाग्रह के लिए

अपने विनियमों को पूर्वव्यापी रूप से बदलने की विशेष कार्रवाई उचित है या नहीं। ऐसा लगता है कि पेंडुलम किसी न किसी तरह से घूम गया है और शायद कुछ मामलों में मामले की इक्विटी और इसके अजीबोगरीब तथ्यों से अधिक प्रभावित है, न कि ठंडे परिकलित तर्क से। विश्वविद्यालय द्वारा अपनी डिग्री प्राप्त करने के लिए निर्धारित मानक और इसे प्राप्त करने की शर्तों के बीच सूक्ष्म अंतर तैयार किया गया है। विचार व्यक्त किए गए हैं कि यदि परीक्षा आयोजित होने के बाद विनियमों में परिवर्तन किया जाता है तो यह मान्य नहीं होगा, जिससे यह संकेत मिलता है कि सिद्धांत रूप में, यदि यह परीक्षा आयोजित करने से पहले किया जाता है, तो यह शायद वैध हो सकता है। इसी तरह, यह राय दी गई है कि यदि पूर्वव्यापी परिवर्तन के छात्र निकाय को उचित सूचना दी जाती है, तो शायद ऐसा परिवर्तन स्पष्ट रूप से निर्धारित या निर्दिष्ट किए बिना टिकाऊ होगा, जिसे ऐसी परिस्थिति में उचित नोटिस के रूप में माना जाना चाहिए। एक मामले में यह तथ्य कि छात्र याचिकाकर्ता परीक्षा देने के बाद अदालत में आया था और आगे यह कि विनियमों में संशोधन काफी समय पहले किया गया था, उसे अनुपयुक्त बनाने का आधार बनाया गया था। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्येक मामले में कठिनाई की प्रकृति और गंभीरता को भी विनियमों में पूर्वव्यापी संशोधनों को बरकरार रखने या रद्द करने में न्यायालय के साथ तौला गया है। बड़ी विनम्रता के साथ मैं यह कहने के लिए विवश हूं कि इनमें से कोई भी शर्त नहीं है मुझे इस मुद्दे पर प्रश्न निर्धारित करने के लिए एक ठोस कानूनी आधार या एक स्पष्ट दिशानिर्देश प्रदान करने के लिए प्रतीत होता है। ऊपर उल्लिखित मामले (और वे मामले जिनके लिए विस्तृत संदर्भ आवश्यक नहीं समझा गया है) ने कानून को इतनी अस्पष्ट स्थिति में छोड़ दिया होगा कि इसे किसी विशेष मामले के तथ्यों की बदलती रेत के संदर्भ में किसी भी तरह से संशोधित किया जा सकता है। मैं इस तरह के अनुभवजन्य विचारों के बजाय एक स्पष्ट कानूनी सिद्धांत पर अपने विचार रखने की उम्मीद करता हूं। मेरे विचार से यह सिद्धांत एक बुनियादी सिद्धांत है कि कानून को सामान्यत भावी माना जाता है जब तक कि स्पष्ट मंशा या आवश्यक निहितार्थ द्वारा इसे पूर्वव्यापी

भी नहीं माना जाना चाहिए। हालांकि, पुनरावलोकन के साथ कपड़े के कानून की यह शक्ति मुख्य रूप से विधायिका की पूर्ण शक्तियों की विशेषता है। पूर्वव्यापी रूप से कानून बनाने की शक्ति एक हाइड्रा हेड हथियार है जिसे सावधानी और सावधानी के साथ चलाया जाना चाहिए और इसलिए यह है कि इसका अभ्यास आम तौर पर अपने प्रतिनिधियों के बजाय विधायिका के ज्ञान पर छोड़ दिया जाता है। हालांकि, इस नियम के लिए, एक स्पष्ट अपवाद है कि विधायिका अधीनस्थ प्राधिकारी को अपनी शक्ति सौंपते समय व्यक्त शब्दों में या आवश्यक इरादे से इसे पूर्वव्यापी कानून बनाने की समान शक्ति प्रदान कर सकती है। इस कानूनी पहलू पर और विस्तार करना अनावश्यक है क्योंकि ऐसा लगता है कि यह अब अंतिम न्यायालय की घोषणाओं से मजबूती से घिरा हुआ है। *आयकर अधिकारी अलेप्पी* बनाम *एमसी पोन्नूस* (5) *और द कन्नानोर स्पिनिंग एंड वीविंग मिल्स लिमिटेड में पहले के फैसलों पर भरोसा करने के बाद। सीमा शुल्क और केंद्रीय उत्पाद शुल्क के कलेक्टर कोचीन* (6), खन्ना जे, *हुकम चंद आदि* बनाम *भारत संघ और अन्य* (7) मामले में पीठ की ओर से बोलते हुए स्पष्ट रूप से कहा है: -

> "अंतर्निहित सिद्धांत यह है कि संप्रभु विधायिका के विपरीत, जिसके पास पूर्वव्यापी संचालन के साथ कानून बनाने की शक्ति है, अधीनस्थ कानून बनाने की शक्ति के साथ निहित प्राधिकरण को अपनी शक्ति की सीमाओं के भीतर कार्य करना होगा और इसका उल्लंघन नहीं कर सकता है।

कानून की उपरोक्त निंदा के आलोक में, वर्तमान मामले में मामले का सार यह है कि क्या पंजाब विश्वविद्यालय अधिनियम की धारा 31 (जिसके तहत लागू विनियम तैयार किए गए हैं) सीनेट को पूर्वव्यापी रूप से विनियम तैयार करने का अधिकार देता है। संदर्भ की सुविधा के लिए, उक्त खंड के प्रासंगिक भाग को पहले निर्धारित किया जा सकता है-

"31 (1) सीनेट, सरकार की मंजूरी से, समय-समय पर, विश्वविद्यालय से संबंधित सभी मामलों के लिए प्रावधान करने के लिए इस अधिनियम के अनुरूप नियम बना सकता है;

(दो) विशेष रूप से और व्यापकता या पूर्वगामी शक्ति के पूर्वाग्रह के बिना, ऐसे विनियमों में निम्नलिखित प्रावधान हो सकते हैं-

(ऑ) किसी भी विश्वविद्यालय परीक्षा के लिए उम्मीदवारों द्वारा पालन किए जाने वाले अध्ययन के पाठ्यक्रम और शर्तों का पालन किया जाना चाहिए, और डिग्री, डिप्लोमा, लाइसेंस, शीर्षक के अंक, सम्मान के अंक, छात्रवृत्ति और विश्वविद्यालय द्वारा प्रदान या प्रदान किए गए पुरस्कार;

उपर्युक्त प्रावधान की सीधी भाषा से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि इसमें ऐसा कुछ भी नहीं है जो सीनेट को पूर्वव्यापी रूप से विनियम तैयार करने की शक्ति प्रदान करे। वास्तव में श्री गुप्ता ने भी गंभीरता से यह तर्क नहीं दिया कि धारा 31 की भाषा इस तरह के किसी भी निर्माण में सक्षम है। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, पूर्वव्यापी रूप से कानून बनाने की शक्ति एक महत्वपूर्ण और शक्तिशाली कार्य है जिसका उपयोग विधायिका द्वारा ही सावधानी के साथ किया जाएगा और यह केवल तभी होता है जब यह स्पष्ट रूप से अपने प्रतिनिधियों को ऐसी शक्ति के प्रयोग को अधिकृत करता है कि अधीनस्थ प्राधिकारी को ऐसी शक्ति माना जा सकता है।

(2) ए.आई.आर. 1970 एस.सी. 385
(3) ए.आई.आर. 1970 एस.सी. 1950
(4) ए.आई.आर. 1972 एस.सी. 2427

मुझे यहां ऐसा कोई प्राधिकरण नहीं मिला। नतीजतन, यह माना जाना चाहिए कि याचिकाकर्ता-प्रतिवादी के नुकसान के लिए परीक्षा लेने की शर्तों को पूर्वव्यापी रूप से बदलने वाले विनियम उस पर लागू नहीं किए जा सकते हैं। इसलिए, उसे उस समय मौजूद विनियमों द्वारा शासित किया जाना जारी रहेगा जब वह अपने अध्ययन के वर्तमान पाठ्यक्रम में शामिल हुआ था।

(16) मामले के इस पहलू से अलग होने से पहले, मैं यह उल्लेख करना चाहूंगा कि यहां हम मुख्य रूप से पंजाब विश्वविद्यालय अधिनियम और उसके तहत बनाए गए विनियमों के प्रासंगिक प्रावधानों से संबंधित थे। नतीजतन, मैं अन्य विश्वविद्यालयों के किसी भी अनुरूप प्रावधानों पर राय नहीं देना चाहूंगा, जिसमें आवश्यक रूप से उनकी विशिष्ट भाषा का निर्माण शामिल होना चाहिए जो अपने विशेष संदर्भ में संविधि के निर्माण को अधिकृत करता है। तथापि, यदि महाजन जे की व्यापक टिप्पणियों का उल्लेख नहीं किया गया होता तो मैं अपने कर्तव्य में असफल होता। *सेवा राम के मामले में* (सुप्रा)। विद्वान एकल न्यायाधीश की कुछ टिप्पणियों को स्पष्ट रूप से उद्धृत करने और अनुमोदित करने के बाद निर्णय के अंतिम पैरा में यह निम्नानुसार देखा गया था: -

> * * किसी भी मामले में, मैं इस तर्क को स्वीकार करने में सक्षम नहीं हूं, कि जैसे ही कोई उम्मीदवार विश्वविद्यालय में प्रवेश करता है, विश्वविद्यालय अपने नियमों को बदल नहीं सकता है और उन परीक्षाओं के लिए अलग-अलग मानकों को निर्धारित नहीं कर सकता है जो छात्र ने पहले ही नहीं लिया है। यदि नए नियम छात्र के अनुरूप नहीं हैं, तो उसे विश्वविद्यालय छोड़ने और कहीं और प्रवेश लेने का पूरा अधिकार है, जहां वह नियमों को अपने लिए अधिक अनुकूल मानता है। विश्वविद्यालय एक स्वायत्त निकाय है और उसे परीक्षाओं के संचालन से संबंधित अपेक्षित नियमों और डिग्री के लिए आवश्यक योग्यता अंकों को बदलने के मामले में

हर अधिकार है, बशर्ते कि नियम उस परीक्षा के लिए पहले से बनाए गए हों जो एक उम्मीदवार को लेने की आवश्यकता होती है।

बड़ी विनम्रता के साथ मैं यह देखने के लिए विवश हूं कि इस तरह के प्रस्ताव को स्वीकार करना संभव नहीं है। फैसले के संदर्भ से पता चलता है कि इसके समर्थन में कोई सिद्धांत या मिसाल नहीं दी गई है। यदि, जैसा कि उपर्युक्त भाषा से पता चलता है, पीठ का इरादा यह घोषित करने का था कि विश्वविद्यालयों के पास अधिनियमित संविधि या उसके प्रावधानों की परवाह किए बिना पूर्वव्यापी प्रभाव से अपने विनियमों को बदलने की अंतर्निहित व्यापक शक्ति है, तो मुझे सम्मानपूर्वक विपरीत दृष्टिकोण अपनाना चाहिए और इस संबंध में कानून की उपरोक्त घोषणा को खारिज करना चाहिए। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, मेरे विचार से इन मामलों को नियंत्रित करने वाला सिद्धांत स्पष्ट होगा - क्या विश्वविद्यालय का निर्माण करने वाले क़ानून की विशेष भाषा उसे पुनरावलोकन के साथ कानून बनाने या विनियमों को तैयार करने के लिए अधिकृत करती है? इस पर और केवल इसी पर इस प्रश्न का उत्तर होना चाहिए कि क्या कोई विश्वविद्यालय अपने छात्र-समुदाय के पाठ्यक्रम, परीक्षा लेने की शर्तों आदि को पूर्वव्यापी प्रभाव से प्रभावित कर सकता है।

(17)अपनी प्राथमिक बात से मुकरते हुए, श्री जे. एल. गुप्ता ने तब अपने द्वितीयक तर्क पर जोर दिया कि यहां लगाए गए विनियमन को पूर्वव्यापी नहीं माना जाना चाहिए, बल्कि वास्तव में एक संभावित था। इस तर्क को इस आधार पर बनाए रखने की मांग की जाती है कि चिकित्सा विज्ञान संकाय में प्रत्येक विश्वविद्यालय परीक्षा को एक स्वतंत्र और अलग इकाई के रूप में माना जाना चाहिए, न कि केवल एक समेकित पाठ्यक्रम में एक कदम। इन परिसरों में यह प्रस्तुत किया गया था कि विश्वविद्यालय द्वारा शुरू किया गया परिवर्तन परीक्षा से संबंधित है जिसे बाद में पालन किया जाना था और इसलिए, संक्षेप में संभावित के रूप में व्याख्या की जानी चाहिए।

(18) मैं सहमत होने में असमर्थ हूं। जब याचिकाकर्ता-प्रतिवादी 1965 में चिकित्सा विज्ञान संकाय में शामिल हुए, तो उन्होंने स्पष्ट रूप से बैचलर ऑफ मेडिसिन और बैचलर ऑफ सर्जरी (एमबीबीएस) की डिग्री प्राप्त करने के इरादे से ऐसा किया। यह सामान्य मामला है कि पहली या दूसरी व्यावसायिक परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद किसी छात्र को कोई डिग्री या डिप्लोमा भी प्रदान नहीं किया जाता है। विनियमों की योजना तब मौजूद थी, इसमें कोई संदेह नहीं है कि चिकित्सा संकाय के लिए अध्ययन का पूरा पाठ्यक्रम एक समेकित और समग्र पाठ्यक्रम था, जिसे शायद ही स्वतंत्र वार्षिक परीक्षाओं से युक्त माना जा सकता था। उस समय मौजूद प्रासंगिक विनियमों के संदर्भ से ही पता चलेगा कि इसकी योजना अध्ययन के पाठ्यक्रम को एकल एकीकृत समग्र के रूप में देखती है। इस संदर्भ में विनियम 2 में कहा गया है कि अध्ययन की पूरी अवधि के दौरान, छात्रों का ध्यान चिकित्सा के निवारक पहलुओं पर निर्देशित किया जाना चाहिए और इस प्रकार एक संकेत दिया जाता है कि पाठ्यक्रम को वार्षिक परीक्षाओं के एक अलग मिश्रण के बजाय अध्ययन की निरंतर अवधि के रूप में माना जाना चाहिए। यह केवल पाठ्यक्रम के अंत और पूरा होने पर है कि छात्र एमबीबीएस की डिग्री का हकदार होगा। विनियम संख्या 28 और 29 के संदर्भ से आगे पता चलता है कि उम्मीदवारों को केवल तभी डिग्री प्रदान की जाएगी जब उन्होंने अनिवार्य रूप से घूमने वाले हाउसमैन-शिप के 12 महीने के लिए परीक्षा के बाद प्रशिक्षण पूरा कर लिया हो। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि पंजाब विश्वविद्यालय के चिकित्सा विज्ञान संकाय में एमबीबीएस की डिग्री अध्ययन का एक एकीकृत समग्र पाठ्यक्रम है।

(19) उपर्युक्त दृष्टिकोण, जिसे मैं अपनाना चाहता हूं, को इस न्यायालय के भीतर दृष्टांत का निरंतर समर्थन प्राप्त है। *बलदेव चंद के मामले* में इंजीनियरिंग में बैचलर ऑफ साइंस की डिग्री को एकल समग्र पाठ्यक्रम के रूप में माना जाता था। इसी तरह *राम प्रकाश नागर के मामले में,* बैचलर ऑफ वेटरनरी साइंस एंड एनिमल हसबेंडरी की डिग्री को एकल पाठ्यक्रम के रूप में माना गया था। *मिस गुरविंदर*

कौर के मामले में कवर की गई रिट याचिकाओं के बैच में, डिवीजन बेंच ने बैचलर ऑफ आर्ट्स के लिए B.Sc (होम साइंस), बैचलर ऑफ आर्ट्स के लिए तीन साल के डिग्री कोर्स (टीडीसी) और कानून विभाग में बैचलर ऑफ लॉ की डिग्री को समेकित पाठ्यक्रम के रूप में माना। अपीलकर्ता की ओर से इस संबंध में मिसाल की लगातार धारा के लिए कोई गंभीर चुनौती पेश नहीं की जा सकती है।

(20) मुझे अपीलकर्ता की ओर से उठाए गए दूसरे तर्क में कोई दम नजर नहीं आता, जिसे परिणामस्वरूप खारिज कर दिया जाता है।

(21) चूंकि अपीलकर्ता की ओर से उठाए गए दोनों तर्क विफल हो जाते हैं, इसलिए लेटर्स पेटेंट अपील को खारिज कर दिया जाता है और विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले की पुष्टि की जाती है। हालांकि, पार्टियां अपनी लागत खुद वहन करेंगी।

प्रेम चंद जैन, न्यायाधीश मैं सहमत हूं।

गुरनाम सिंह, न्यायाधीश मैं सहमत हूं।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

कोमल दहिया

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

फ़रीदाबाद, हरियाणा